International Journal of Advanced Educational Research
ISSN: 2455-6157; Impact Factor: RJIF 5.12
Received: 11-02-2020; Accepted: 12-03-2020; Published: 08-04-2020
www.educationjournal.org
Volume 5; Issue 2; 2020; Page No. 09-13

समकालीन हिंदी उपन्यासों में मुस्लिम विमर्श

डॉ० प्रीति अग्रवाल
Post-Doctoral fellow PGDAV Delhi University Delhi, Delhi, India

प्रस्तावना

मुस्लिम विमर्श मुसलमानों को जानने समझने, उनके रीति रिवाज, उनकी शैक्षणिक स्थिति, आचार विचार, मुस्लिम जीवन में व्याप्त विसंगतियों को समझने की प्रक्रिया का नाम है। भारत के मुसलमानों और अन्य देशों के मुसलमानों में अंतर है। मुस्लिम आदमी यहां रहते हुए भी पूरे मन से यहाँ के नहीं माने जाते यह एक कड़वा सच है। यह प्रश्न ही मुस्लिम विमर्श का केंद्र बिंदु है। उन्हें बार–बार यह साबित करना पड़ता है कि वह भी देश प्रेमी है। मुस्लिम समाज भारतीय समाज का अभिन्न अंग है। हिंदू समाज की तरह मुस्लिम समाज भी अनेक वर्ग और मतों में बँटा हुआ है। मुस्लिम स्त्री की स्थिति अन्य भारतीय स्त्रियों से ज्यादा नाजुक और दयनीय है। हिंदुस्तान में मुसलमान सुन्नी, बोहरा, अहमदिया और न जाने कितने फिरकों में बंटे हुए हैं। आज पूरी दुनिया में इस्लाम के प्रति डर और नफरत का माहौल बना हुआ है। हर तरफ इन्हें शक की निगाह से देखा जाता है । जनसंख्या के अनुपात में सबसे ज्यादा मुसलमान जम्मू–कश्मीर में आबाद हैं। भारत में सबसे ज्यादा निरक्षर मुस्लिम आबादी ही है। 2011 की जनगणना से पता चलता है कि भारत में 42.7ः मुस्लिम अशिक्षित है। अधिकांश मुस्लिम बच्चे मदरसों में पढ़ते हैं जो बहुत सस्ती और प्राचीन शिक्षा पद्धति है। इसमें विज्ञान, तकनीक, गणित और अंग्रेजी की उच्च शिक्षा का अभाव है। इस प्रकार मुस्लिम आबादी आधुनिक शिक्षा में पिछड़ रही है। सांप्रदायिकता और आतंकवाद की आग में जलते हुए बार–बार मुसलमानों से यह प्रश्न पूछा जाता है क्या वह देश प्रेमी है ? हिंदू मुसलमान सदियों से मिलकर इस देश में रहते आए हैं यहां तक कि अधिकांश मुसलमानों के बाप दादा यहीं पैदा हुए हैं। समकालीन उपन्यासकारों में अब्दुल बिस्मिल्लाह, शानी, राही मासूम रजा, बड़ी उज्जमा, नासिरा शर्मा और मेहरून्निसा परवेज उपन्यासकारों ने मुस्लिम समाज में व्याप्त विसंगतियों, विडंबनाओं पर गहरी चोट की है। सन् 16 में शानी के 'काला जल' उपन्यास का पात्र कहता है –

"(1) वह दौर जब हम शक की नजरों से देखे जाते थे। स्कूल के लड़के हम लोगों पर ताने कसते थे कि भेजो सालों को पाकिस्तान और मुझे यह सोच कर रोना आता था कि यह हमें बेईमान क्यों समझते हैं? हमारा दोष क्या सिर्फ यही है कि हमने मुसलमान परिवार में जन्म लिया। (1)"

'अपवित्र आख्यान' अब्दुल बिस्मिल्लाह द्वारा रचित उपन्यास है। अपवित्र आख्यान हिंदू–मुस्लिम संबंधों और रिश्तों की मधुरता और कड़वाहट की कहानी का सूक्ष्म चित्रण है। उपन्यास का नायक हिंदू मुस्लिम में कोई भेद नहीं मानता लेकिन बार–बार वह अनुभव करता है कि वह मुसलमान है। उपन्यास की नायिका भी इस्लाम धर्म का पूरा पालन करती है नमाज पढ़ती है, रोजे करती है लेकिन नौकरी के लिए मुस्लिम नेता से हमबिस्तर होने में परहेज नहीं करती। मुसलमानों के बारे में लेखक लिखते हैं –

"(2) इस देश में कुछ ऐसे मुसलमान भी हैं जो हिंदुओं से भी बदतर है। हिंदू कम–से–कम गाय तो नहीं खाता क्योंकि वह जानता है कि यह उसके धर्म के विरुद्ध है। लेकिन यह जानते हुए भी कि शराब पीना इस्लाम में हराम है कुछ मुसलमान इस हराम चीज का सेवन करते हैं। जबकि कुरान मजीद में एक दो जगह नहीं बल्कि सैकड़ों आयतों में शराब पीने को हराम करार दिया गया है। (2)"

धर्म के नाम पर मुस्लिम महिलाओं का शोषण किया जाता है। इस्लाम की सही व्याख्या न होने के कारण मुस्लिम महिलाओं को वह तमाम अधिकार नहीं मिल पा रहे जो उन्हें मिलने चाहिए। मैहर की प्रथा, हलाला निकाह, हदूद कानून, बुर्का प्रथा आदि ऐसी बहुत सी प्रथाएं हैं जो मुस्लिम महिलाओं को आगे नहीं बढ़ने देती। मुस्लिम महिलाएं इन सभी को नकार कर इनके विरुद्ध लिख भी रही है। मुस्लिम स्त्री की सोच में भी धीरे–धीरे परिवर्तन आ रहा है। वह पुरानी धार्मिक रूढ़ियों और रीति–रिवाजों को नकार रही है। आर्या मंजू ने मुस्लिम महिलाओं के विषय में लिखा है –

"(3) मुस्लिम महिला अशिक्षित होने के कारण पुरुषों के जुल्मों को सहन करती है, अगर वह जागरूक होती है या पित्त सत्ता का विरोध करती तो आंदोलन की जरूरत ही ना पड़ती। आज पूरी दुनिया में मुसलमान स्त्रियों का रुझान स्त्री मुक्ति आंदोलन की तरह बढ़ रहा है। वह धीरे–धीरे आंदोलन की मुख्य धारा से जुड़ कर अपने अधिकारों को प्राप्त करने एवं समस्याओं को स्वयं सुलझाने का प्रयास कर रहीं हैं लेकिन अभी भी मुस्लिम तबके की महिलाओं को पर्दा प्रथा, शिक्षा का अभाव, परिवार नियोजन, बहुपत्नी विवाह, तलाक, संपत्ति में अधिकार न मिलना, बाल विवाह, आर्थिक स्थिति, राजनैतिक, सामाजिक इस तरह के कई मुद्दे हैं। जिनसे महिलाएं बेबस, सहमी, डरी डरी सी अपनी बातों को समाज अपने परिवार में उजागर नहीं कर पा रही है। (3)"

नासिरा शर्मा ने अपने उपन्यास ''ठीकरे की मंगनी'' में मुस्लिम महिला के मर्म को पकड़ने की कोशिश की है। उपन्यास के शीर्षक ''ठीकरे की मंगनी'' मुस्लिम समाज के उस रिवाज को दर्शाता है अगर किसी परिवार में बच्चे जन्म लेते ही मर जाते हैं तो वहां एक टोटका किया जाता है – गंदगी से भरे ठीकरे पर चांदी का सिक्का फेंका जाता है जिससे बच्चा बच जाए। लेखिका दिखाती है कि मेहरूख के हाईस्कूल की परीक्षा पास होते ही उसका विवाह खालाजाद भाई रफत से तय हो जाता है। मेहरूख आगे पढ़ना चाहती है लेकिन माता–पिता जानते हैं कि घर में कोई इस बात को हजम नहीं कर पाएगा की लड़की को उसके मंगेतर के साथ बाहर पढ़ने भेजा जाए। मेहरूख की अम्मा कहती है –

"(4) मैं तो इतना जानती हूं कि हम तब नहीं डरे लोगों की बोलियों– ठोलियों से तो अब क्या खाक डरेंगे? मैं औरत हूं खूब अच्छी तरह जानती हूँ कि इस नए दौर में औरतों के लिए मजबूती क्या होनी चाहिए। जमाने के कहने से क्या हमने लड़कियां स्कूल से निकाल ली थी? अपने ही दोस्त के घर नजर डालो, नसरीन के मियां ने छोड़कर दूसरी कर ली। बीवी चुपचाप मायके आन बैठी। कहने को दोनों चाचाजाद बहने हैं, एक खानदान, एक माहौल, एक तरह की परवरिश मगर तालीम से समझ तो बढ़ी, अपना हक तो पहचाना – गलत तेजी की तरफदार मैं तो नहीं हूँ मगर लड़की को अच्छा बुरा समझने की अक्ल तो तालीम ही दे सकती है। (4)"

आज समाज में हर वर्ग धीरे–धीरे शिक्षा के महत्व और आवश्यकता को पहचानने लगा है। रफत भाई भी दिल्ली जाते वक्त मेहरूख से कहता है –

"(5) मेहरूख इन पुरानी बेड़ियों को काट फेंको, दकियानूसी तौर–तरीकों से खुदा हाफिज कहो। आज से तुम्हारा नया सवेरा शुरू हुआ है। उठो, सूरज को खुशामदीद कहकर उसकी किरणों का स्वागत करो। मैं तुमको एक सिसकती बेबस औरत के रूप में नहीं देखना चाहता हूँ बल्कि एक मजबूत इरादों की तरक्कीयत औरत के रूप में फलता फूलता देखना चाहता हूँ। (5)"

उपन्यास में आगे दिखाया गया है कि रफत भाई मेहरूख को छोड़कर किसी अन्य लड़की के साथ जीवन बिताने लगते हैं। रफत कुछ समय बाद अपनी गलती मान कर वापस मेहरूख के पास आता है लेकिन मेहरूख किसी की दया नहीं चाहती वह अपना रास्ता खुद बनाना चाहती है। चाहे प्रेमचंद हो, कमलेश्वर हो या उपेंद्रनाथ अश्क इसके अतिरिक्त भी कुछ प्रसिद्ध लेखकों और कवियों ने मुस्लिम समाज और उनके दर्द उनकी समस्याओं को अपनी लेखनी से चित्रित किया है। राही मासूम रजा का उपन्यास 'आधा गांव' में यही दिखाया गया है कि आजादी के पहले हिंदू–मुसलमान दोनों आपसी सौहार्द से मिलजुल कर रहते थे। दोनों ही धर्म के लोग एक दूसरे के धार्मिक उत्सवों में शामिल हुआ करते थे। विभाजन होते ही दोनों के बीच मतभेद खड़े हो गए। राही मासूम रजा का ही दूसरा उपन्यास 'दिल एक सादा कागज' यह दिखाता है कि जो मुसलमान अपनी बहन–बेटियों की इज्जत बचाने के लिए पाकिस्तान चले गए थे उन्हें न तो ढंग का रोजगार ही मिल पाया न ही सम्मान प्राप्त हो सका बल्कि यहां उन्हें 'मुजाहिर' कहा गया। राही मासूम रजा ने 'ओस की बूंद' नामक उपन्यास में दिखाया है कि विभाजन के बाद मुसलमान किस प्रकार परायेपन का शिकार बन गए। इस उपन्यास में मुस्लिम भारतीय परिवारों का बड़ा ही मार्मिक चित्रण किया है। बलवंत सिंह का उपन्यास 'काले कोस' पंजाब की पृष्ठभूमि को आधार बनाकर लिखा गया है इस उपन्यास में भी लेखक ने दिखाया है कि आजादी के पहले हिंदू मुसलमान में अपनापन था, भाईचारा था लेकिन आजादी के बाद में भाईचारा खत्म हो जाता है और दोनों एक दूसरे के खून के प्यासे हो जाते हैं। भीष्म साहनी का 'तमस' उपन्यास सांप्रदायिकता फैलाने वाले कारकों पर प्रकाश डालते हुए दिखाया है कि कैसे वर्षों की साझी संस्कृति नफरत और मतभेद में बदल जाती है सन् 2000 में भीष्म साहनी का उपन्यास 'नीलू नीलिमा नीलोफर' उपन्यास में भीष्म साहनी यह दिखाते हैं कि अगर आज भी समाज में हिंदू और मुसलमान में अगर वैवाहिक संबंध स्थापित हो जाए तो तहलका सा मच जाता है। शिवप्रसाद मिश्र ने अपने उपन्यास 'अलग–अलग वैतरणी' में हिंदुस्तान में रहने वाले मुसलमानों की दुर्दशा का चित्रण किया है। बार–बार मुसलमानों को यह एहसास कराया जाता है कि जब पाकिस्तान बन गया है तब वह भारत में क्या रह रहे हैं। उपन्यास का पात्र कॉन्स्टेबल जगेसर कहता है –

"(6) तब तो मियां चिल्ला रहे थे कि पाकिस्तान लेंगे अब तो सालों ने ले लिया पाकिस्तान। जाओ ऊहाँ। यहां क्यों पडे हो भाई। (6)"

हम अभी तक यही मानते हैं कि विभाजन के लिए मुसलमान जिम्मेदार है। हम यह भूल जाते हैं कि उस वक्त के राजनैतिक नेताओं ने विभाजन के लिए धर्म का सहारा लिया। बड़ी उज्जमा के उपन्यास 'छाको की वापसी' में लेखक ने दिखाया है कि विभाजन के बाद बिहार में बसने वाले मुसलमान पूर्वी पाकिस्तान चले जाते हैं लेकिन वहां बंगाली मुसलमान और बिहारी मुसलमानों में आपसी भेदभाव शुरू हो जाते हैं। बिहार के मुसलमान न तो मन से पाकिस्तान से जुड़ पाते हैं और न ही बिहार को छोड़ने का मोह मिटा पाते हैं। वह वापिस अपने वतन आने के लिए छटपटाते हैं पर कानून उन्हें इसकी इजाजत नहीं देता। वह भीतर ही भीतर छटपटाते रहते हैं। इस उपन्यास में लेखक ने जो मुस्लिम–मुस्लिम के बीच के अंतर्विरोध को उजागर किया है। आजादी के बाद जो मुसलमान भारत में रह गये। उनकी दशा अत्यंत दयनीय हो गई। अपने देश में उन्हें शक की नजर से देखा जाता है उन्हें बार–बार अपने देश प्रेमी होने का सबूत देना पड़ता है।
मंजूर एहतेशाम का उपन्यास 'सूखा बरगद' इस दृष्टिकोण से महत्वपूर्ण है। उपन्यासकार लिखते हैं –

"(7) अब्बू धार्मिक कट्टरता से दूर एवं एक उदार इंसान थे, वे देश का बंटवारा होने पर पाकिस्तान नहीं जाते वे पाकिस्तानियों को अजनबी मानते हैं। आजीवन उन्हें संकीर्ण मनोवृत्तियों वाले लोग से जूझना पड़ता है इस लड़ाई में वे जीत नहीं पाते लेकिन जिस बहादुरी और निष्ठा से यह लड़ाई लड़ते हैं, वे बेजोड़ है। (7)"

सन् 2006 में हुआ महुआ मांझी का उपन्यास "मैं बोरिशाइल्ला" प्रकाशित हुआ। बांग्लादेश के बीरीशाल नामक इलाके को कथा के केंद्र में रखा गया है। लेखक ने दिखाया है पहले धर्म के आधार पर देश का विभाजन हुआ बाद में भाषा के आधार पर बांग्लादेश का। रातों–रात लोग हिंदुस्तानी से पाकिस्तानी बन गए। जिस आजादी के लिए मुसलमानों ने भी कुर्बानी दी थी उन्हें पता चलता है कि इस देश में अब उनके लिए कोई जगह नहीं है। राही मासूम रजा के उपन्यास 'टोपी शुक्ला' में भी उपन्यासकार ने दिखाया है कि धीरे–धीरे टोपी के मन में यही भर दिया जाता है कि जब तक इस देश से मुसलमानों को खदेड़ नहीं दिया जाता है तब तक देश का उद्धार नहीं हो सकता। गीतांजलि श्री के उपन्यास 'हमारा शहर उस बरस' उपन्यास में यही दिखाया गया है कि अंग्रेजों ने धर्म के नाम पर जो देश में बांटा आजादी के बाद भी राजनेताओं ने उस फूट को बढ़ाने का काम किया है। मुसलमानों के उद्धार के लिए कांग्रेस ने कुछ सार्थक कदम नहीं उठाए। देश की सर्वोच्च अदालत में हलफनामा देने के बावजूद भी बाबरी मस्जिद ढहा दी गई। मोहम्मद आरिफ ने अपने उपन्यास 'उपयात्रा' में बाबरी मस्जिद ध्वंस और उसके बाद फैले जहरीले वातावरण का चित्रण किया है। आज भी मुसलमानों के लिए हिंदू काफिर हैं और हिंदुओं के लिए मुसलमान अविश्वास के योग्य है। कुंवर पाल सिंह ने लिखा है –

"(8) घृणा और ईर्ष्या के आधार पर कोई नव निर्माण नहीं किया जा सकता केवल मनुष्य, समाज और देशो को बांटा जा सकता है। धर्म और संस्कृति का घोलमेल भी अनेक त्रासदियों को जन्म देता है। धर्म व्यक्तिगत होता है, संस्कृति सामूहिक होती है। वह धर्म और संप्रदाय से ऊपर मनुष्यता के सूत्र जोड़ने वाली शक्ति है। पाकिस्तान का निर्माण भी धर्म का राजनीति में प्रयोग, संस्कृति की गलत व्याख्या, सद्भाव और प्रेम के मूल्यों का ह्रास तथा आपसी अविश्वास के कारण हुआ। (8)"

स्वतंत्रता के बाद मुसलमानों का सफर भारत में आसान नहीं था।राही मासूम रजा ने मुसलमानों की पीड़ा, अकेलापन, आर्थिक विपन्नता और समाज के साथ ना चल पाने के कारण पिछड़ जाने की कुंठा को मार्मिकता के साथ उभारा है। देश के विभाजन के बाद मुसलमानों के सामने अपने अस्तित्व को लेकर अनेक समस्याएं खड़ी हो गई। जमीदारी चले जाने से ग्रामीण मुसलमानों की आर्थिक स्थिति बद से बदतर हो गई।एक और मुसलमानों को विभाजन के दौरान भयानक हिंसा का शिकार होना पड़ा। वहीं दूसरी ओर पाकिस्तान से आए शरणार्थी के सम्मुख भी जीविका का प्रश्न एक बड़ा प्रश्न था। रजनी पाम दत्त ने एक स्थल पर रखा है –

"(9) भारत की हिंदू मुसलमान जनता के दो अलग–अलग लक्ष्य नहीं हो सकते और न हैं। मुसलमानों की गरीबी और गुलामी तथा हिंदुओं की गरीबी और गुलामी अलग–अलग चीजें नहीं है बल्कि वे समूचे भारत की गरीबी और गुलामी हैं। भारत के हजारों लाखों गांव में हिंदू और मुसलमानों की आबादी का एक बड़ा हिस्सा एक जैसी जमींदारी प्रथा के नीचे पिस रहा है,एक जैसे सूबेदार महाजनों की लूट का शिकार हो रहा हैं, एक जैसे साम्राज्यवाद के दमन का शिकार हो रहा है, और इन दोनों वर्गों के बीच फूट डालने की कोशिश वस्तुतः शोषण की इस व्यवस्था को बरकरार रखने की कोशिश है। (9)"

नासिरा शर्मा ने अपने उपन्यास 'जिंदा मुहावरे' में दिखाया है परिवार वालो के विरोध के बावजूद भी निजाम पाकिस्तान चला जाता है वहां जाकर वह संपन्न भी हो जाता है। लेकिन अकेलापन उसे कचोटता रहता है। जब वह भारत आता है तो उसके परिवार वाले तो उससे गर्मजोशी से मिलते हैं लेकिन उसके बचपन का दोस्त बदल जाता है। नासिरा शर्मा का उपन्यास उन मुसलमान युवकों की मानसिकता पर प्रकाश डालते जो पाकिस्तान जाना ही अपना जीवन लक्ष्य मानते हैं। प्रोफेसर असगर वजाहत लिखते हैं –

"(10) मुसलमानों की मूल समस्याएं अशिक्षा, बेरोजगारी आदि तो वही है जो बहुसंख्यक समाज की है लेकिन इसमें भी कोई संदेह नहीं है कि मुसलमान समाज हिंदू समाज की तुलना में अधिक पिछड़ा हुआ है। जहां तक मुसलमानों की सबसे बड़ी समस्या संप्रदायिक दंगों का सवाल है, हम देखते हैं इसमें कोई कमी नहीं आई है, बढ़ोतरी हुई है। (10)"

शानी, राही मासूम रजा, बदी उज्जमाँ, मंजूर एहतेशाम, अब्दुल बिस्मिल्लाह, मेहरून्निसा परवेज, नासिर शर्मा, असगर वजाहत, हबीब कैफी जैसे उपन्यासकारों ने भारतीय मुसलमानों की चिंता उनका सुरक्षा, भुख, गरीबी, पिछड़ापन, मुसलमान संप्रदाय में व्याप्त अंतर्विरोध और कमजोरियों का सजीव चित्रण किया है।इन उपन्यासकारों के माध्यम से पाठकों को मुस्लिम समाज के अंदर अनेक जानकारियां मिलती हैं। साथ ही मुसलमान समाज की आंतरिक कमजोरियों और अंतर्विरोध का भी पता चलता है। नासिर शर्मा और मेहरून्निसा परवेज ने मुस्लिम औरतों की समस्याओं को उठाया है। अब्दुल बिस्मिल्लाह ने अपने उपन्यासों 'झीनी झीनी बीनी चदरिया' और 'मुखड़ा क्या देखें' उपन्यासों में निम्न वर्गीय समाज के संघर्षों का सजीव चित्रण किया है। मुस्लिम समाज की स्त्रियों के जीवन में आए परिवर्तनों को भी समकालीन उपन्यास कारों ने रोचकता से चित्रित किया है। मुस्लिम स्त्री भी धार्मिक रूढ़ियों और सामाजिक बंधनों को ठेंगा दिखाती हुई अपनी अभिलाषाओं और सपनों को पूरा करना चाहती है। आज भारतीय मुसलमान हाशिए पर खड़ा है, उसकी आर्थिक दशा निरंतर खराब हुई है। उनकी राष्ट्रीयता और नियत पर सभी शक कर रहे हैं। हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि ऐसे मुसलमानों की भी कमी नहीं हैं जिनमें भारतीयता का रंग कूट–कूट कर भरा है। अब्दुल बिस्मिल्लाह का उपन्यास 'कुंठावँ' दलित मुसलमानों के विशेषतः हेला (हलालखोर) समुदाय की औरतों का ऐसा मार्मिक चित्रण किया है कि मन भर उठता है आम घरों के पखाने साफ करने की जिम्मेदारी इन औरतों पर थी, लेखक ने दिखाया है कि एक पूरी जाति को जन्म के आधार पर इस गलीज काम में लगा रखा है। लेखक ने पखानों का चित्रण करते हुए लिखा –

"(11) असलम खड्डी में गया वहां भयंकर बदबू थी..... उसने अपनी लुंगी उठाकर उसके एक कोने से नाक को दबाया फिर वह डरता हुआ गौर से देखने लगा। खड्डी में कोई खिड़की नहीं थी, मगर खपरैल के टूटे हुए हिस्से से सूरज की रोशनी अंदर आ रही थी। उसी रोशनी में असलम ने देखा कि खड्डी में रखी दो ईटों के बीच में ढेर सारा पखाना पड़ा हुआ था और सफेद रंग के दो लंबे–लंबे कीड़े उसमें कुल बुला रहे थे। (11)"

यह चित्र पढ़ने में इतनी घिन आती है। जिसे यह सब साफ करना पड़ता होगा उसकी क्या हालत होती होगी। इस उपन्यास में लेखक ने 'मुस्लिम समाज' की जाति व्यवस्था पर प्रकाश डाला है। हिंदू समाज की तरह मुस्लिम समाज भी छुआछूत से भरा पड़ा है। यहां मस्जिदों के आगे की सफें अशरफ जातियों के लिए आरक्षित है। हलालखोर का छुआ पानी पीना गलत है। कुठाँव की कहानी का केंद्र मिर्जापुर का गांव गोपालगंज है। एक संपन्न और दबंग परिवार का लड़का और एक हलालखोर की लड़की के बीच संबंध स्थापित हो जाता है। खां साहब का बेटा हलालपुर की बेटी सितारा के घर के चक्कर लगाकर उसके आगे पीछे घूमता है ताकि जिस्म की भूख मिटा सके। सितारा की माँ यह सब जानती है पर वह इसे रोकती नहीं क्योंकि वह चाहती है कि उसकी बेटी की शादी ऊंची जाति में हो जाए। लेखक ने दिखाया है कि हलालपुर जाति की स्त्रियों को शारीरिक शोषण झेलना पड़ता है। खान साहब जब चाहे किसी लड़की की छाती पर हाथ रख देते थे। अब्दुल बिस्मिल्लाह ने इस उपन्यास में मुस्लिम समाज के संघर्ष, संवेदना, अंतर्द्वंद और यातना का बड़ा सजीव चित्रण किया है। लेखक ने दिखाया है कि मेहनतकश वर्ग समाज की आधारभूत सुविधाओं से आज भी वंचित है। 'सात आसमान' नामक उपन्यास में असगर वजाहत ने मुस्लिम जमीदारों की शानो शौकत और आंतरिक जीवन यथार्थ को व्यक्त किया है। मुस्लिम जमीदारों की ऐय्याशी का चित्रण करते हुए लेखक ने लिखा है –

"(12) अब्बा मियां रखैलों के अलावा दूसरी औरतों से ताल्लुकात करते थे। इस बात का ख्याल रखते थे की रखैल उनके ही पास आए दूसरों के पास ना जाए। दादी की जिंदगी में भी उनके पास कोई ना कोई रखैल जरूर रहती थी, पर उसे रोज ना बुलाते थे। दादी जल्दी ही मर गई थी। (12)"

मुस्लिम जमीदार धरनो में भी औरतें उपभोग की वस्तु से अधिक न थी। लेखक लिखते हैं –

"(13) ब्याह कर जो बहू आयी उसे जल्द ही पता चल गया कि उसका मियां दिवाना है। बहु ने उफ तक न की। न तो उसने

यह बात अपने घर वालों को बताई और ना अपने ससुराल वालों पर कोई इल्जाम धरा। (13)"

सन् 1960 से पूर्व मुस्लिम समाज उपन्यासों में आंशिक रूप से नजर आता है। वहाँ हमें मुसलमान समाज का समग्रता से चित्र नहीं मिलता। सन 1980 के बाद उपन्यासकारों ने जैसे अजगर वजाहत,नासिरा शर्मा, अब्दुल बिस्मिल्लाह, मंजूर एहतेशाम ने मुस्लिम समाज को अपने उपन्यासों में केंद्रीय विषय बनाया है। इन मुसलमान लेखकों ने अपने भोगे हुए यथार्थ को प्रमाणिकता के साथ प्रस्तुत किया है।

गोविंद मिश्र का उपन्यास 'खिलाफत' भारतीय मुसलमानों को अलग रख कर देखता है। उपन्यास में आलिया और यूनुस के बीच पनपते प्रेम को कश्मीर घाटी में चित्रित किया गया है। कश्मीर घाटी में पलने वाले यूनुस के भाई को मजहब का बुलावा सुनाई देने लगता है। जिहाद के नाम पर नौजवानों को भड़काया जाता है और यूनुस का भाई जिहाद के मार्ग पर चल पड़ता है। लेखक ने आलिया के पिता द्वारा एक ऐसा चरित्र अपने सामने रखा है जो अपने मजहब का पालन तो करता है लेकिन खुले दिमाग का मुसलमान है –

"(14) हम कश्मीर में हैं पाकिस्तान में नहीं। बेग साहब को दूसरे मजहब के लोगों से परहेज भी नहीं है और न ही यह कट्टरपन कि नमाज का वक्त हो गया तो दफ्तर का जरूरी काम छोड़कर वहीं नमाज के लिए बैठ जाएं.... यह करना है तो दफ्तर के लिए जाते ही क्यों हो, जाते हो तो काम ही तुम्हारी इबादत है। दफ्तर के घंटों में नौकरी ही तुम्हारा मजहब है, वहां के कायदे कानून मानने होंगे, उनके हिसाब से चलना होगा.... वरना दफ्तर कैसे चलेंगे? (14)"

आलिया पढ़ लिखकर अच्छी नौकरी पाकर दिल्ली चली जाती है और यूनुस का भाई अशरफ जिहाद के नाम पर आई. एस. से जुड़ता है। इस्लाम को अमन का मजहब कहा जाता है लेकिन आई. एस. के वीडियो में कहा जाता है –

"(15) इस्लाम हमेशा से जंग का मजहब रहा है। पैगंबर का हुकुम है कि जब तक सब जगह अल्लाह का मजहब कायम नहीं हो जाता, जंग जारी रहनी चाहिए, इस्लाम की जंग लड़ना उम्मत का फर्ज है। (15)"

कश्मीर में 95ः से अधिक इस्लाम के अनुयायी हैं। मौलाना फखरुद्दीन कहते हैं –

"(16) मुसलमानों की बदहाली कमोवेश सभी जगह है। आप हम महसूस नहीं करते लेकिन नौजवानों का खून गर्म होता है। वे उबल पड़ते हैं। उनकी उम्र ख्वाब देखने की भी है तो ख्वाब उन्हें खींचते हैं जैसे सुन्नी सल्तनत का ख्वाब गए वक्त की अपनी इस्लामी शानो शौकत वापस लाने का ख्वाब। (16)"

गोविंद मिश्र ने दिखाया है कि यह अचानक नहीं कि कश्मीर घाटी में पाकिस्तानी झंडे लहराए जाते हैं। आई. एस. के काले झंडे भी वहां देखे जाने लगे हैं। वह लिखते हैं –

"(17) आई. एस. ने अफगानिस्तान के एक इलाके नामनगन जो पाकिस्तान से सटे बॉर्डर पर है वहां अपना सेंटर खोला है और उसका एक मकसद हिंदुस्तानी मुसलमानों को हिंदुओं के चुंगल से छुड़ाना भी है जिसका रास्ता पाकिस्तान से होकर जाता है, जिससे गुजरना ही है। (17)"

गोविंद मिश्र ने यह भी दिखाया है कि बेग साहब जैसे बुजुर्ग तालिबानी आई.ई. एस. इस्लाम की हकीकत पहचानने लगे हैं –

"(18) जिहादी जंग के नीचे कहीं कहीं ड्रग्स का कारोबार, लड़के लड़कियों की तिराजत, चोरी डकैती यह भी चल रहे हैं। एक अन्य स्थल पर लेखक ने लिखा है – "यहां लड़कियां भी रिक्रूट होती हैं जो जिहादी दुल्हन बनाई जाने के लिए आई. एस तक पहुंचाई हैं, जिहादियों के लिए तोहफा। (18)"

कश्मीर में होने वाली दहशतगर्दी के माध्यम से लेखक यही दिखाना चाहता है कि राजनीति ने धर्म को अपने बचाव के लिए हथियार के रूप में इस्तेमाल किया है। धर्म के नाम पर अंधे यह नौजवान मुसलमान जिहाद के नाम पर सही गलत का विवेक खो बैठे हैं। यूनुस आलिया से कहता है –

"(19) आई. एस. की वजह से सारी दुनिया में मुसलमान जमात बदनाम हो गई है। हम कहीं भी जाएं मुसलमान होने का ठप्पा हमारा पीछा नहीं छोड़ेगा, हमें शक की निगाहों से ही देखा जाएगा। (19)"

गोविंद मिश्र का यह उपन्यास एक वर्जित गुफा में प्रवेश करता है। यह उपन्यास खुले दिमाग से एक संवाद की मांग करता है । लेखक यूनुस के माध्यम से कहता है –

"(20) चुनौती दरअसल इस्लाम नहीं... उसका यह जो एक छोटा बड़ा फिरका, कोई गैर जिम्मेदार जमावड़ा इस्लाम का कोई भी रंग पेश करता चला आता है, उसके नाम पर दहशतगर्दी मारकाट.... कुछ भी जायज ठहराता है.... चुनौती वह है। (20)"

'जिहाद' अरबी भाषा का शब्द है जिसका अर्थ है 'संघर्ष करना'। जिहाद का अर्थ किसी की जान लेना, कत्ल करना नहीं है । जिहाद का अर्थ अपने अंदर की बुराइयों से लड़ना है। उसका अर्थ तोड़ मरोड़ कर लोग भोले भाले मुसलमान नौजवानों को भ्रमित है। इस बात से कोई इनकार नहीं कर सकता है कि कश्मीर में बड़े पैमाने पर एक सशस्त्र उग्रवाद की शुरुआत हुई है। लेखक ने लिखा है –

"(21) वही दोगली शिकायत ....इनके लड़के लड़की लंदन, अमेरिका, बेंगलुरु, दिल्ली जैसी जगह पर तालीम हासिल कर नेता, अफसर, उद्योगपति बनते हैं और आम कश्मीरी बच्चों के हाथों पत्थर, हथगोले बंदूक थमा देते हैं कि मारो और मरो। (21)"

कश्मीर के मुसलमान बहुल होने के कारण घाटी के मुस्लिम समाज में पाकिस्तान के प्रति विशेष लगाव है। कश्मीर की समस्या भी सुलझ पायेगी जब हम अपनी समस्याओं के लिए पाकिस्तान की ओर से ना देख कर भारतीय लोकतंत्र में विश्वास रखेंगे। यह बात कश्मीरी जितनी जल्दी समझेंगे उतना बेहतर है अतः हम ऐसा कह सकते हैं कि समकालीन हिंदी उपन्यास कारों ने मुस्लिम समाज में व्याप्त विसंगतियों और गहराई से चित्रित किया है।

संदर्भ ग्रंथ

1. काला जल, शानी, पृ० 54
2. अपवित्र आख्यान, अब्दुल बिस्मिल्लाह, पृ० 34
3. साहित्य में मुस्लिम महिलाओं के मुद्दे, आर्या मंजू, पृ० 9
4. ठीकरे की मंगनी, नासिरा शर्मा, पृ० 22
5. ठीकरे की मंगनी, नासिरा शर्मा, पृ० 34
6. अलग अलग वैतरणी, शिवप्रसाद मिश्र, पृ० 64
7. सूखा बरगद, मंजूर एहतेशाम, पृ० 48
8. मार्क्सवादी सौंदर्यशास्त्र और हिंदी उपन्यास, कुंवर पाल सिंह, पृ० 188

9. आज का भारत, रजनी दत्त पाम, पृ० 468
10. हंस, अगस्त 2003, पृ० 6
11. कुठाँव, अब्दुल बिस्मिल्लाह, पृ० 74
12. सात आसमान, असगर वजाहत, पृ० 34
13. सात आसमान, असगर वजाहत, पृ० 34
14. खिलाफत, गोविंद मिश्र, पृ० 13
15. खिलाफत, गोविंद मिश्र, पृ० 52
16. खिलाफत, गोविंद मिश्र, पृ० 42
17. खिलाफत, गोविंद मिश्र, पृ० 119
18. खिलाफत, गोविंद मिश्र, पृ० 73
19. खिलाफत, गोविंद मिश्र, पृ० 112
20. खिलाफत, गोविंद मिश्र, पृ० 213
21. खिलाफत, गोविंद मिश्र, पृ० 195